देहात्मबुद्धि से ग्रस्त है, अर्थात् देह को अपना स्वरूप मानता है, तब तक उसे बद्ध समझा जाता है; किन्तु स्वरूप-साक्षात्कार द्वारा समता के स्तर पर आरूढ़ होते ही वह बद्ध जीवन से मुक्त हो जाता है। दूसरे शब्दों में, उसका प्राकृत-जगत् में पुनरागमन नहीं होता, वरन् देहान्त होने पर वह भगवद्धाम में प्रविष्ट हो सकता है। रागद्वेषशून्य होने से श्रीभगवान् सर्वथा निर्दोष हैं। इसी भाँति, रागद्वेष से छूट जाने पर जीवात्मा भी निर्दोष होकर परव्योम में प्रवेश का अधिकारी बन जाता है। ऐसे जीवों को जीवन्मुक्त समझना चाहिये। उनके लक्षणों का वर्णन अधोलिखित है।

21/5

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद्ब्रह्मणि स्थितः।।२०।।

न प्रहृष्येत्=हर्षित नहीं हो; **प्रियम्**=प्रिय को; **प्राप्य**=प्राप्त होकर; **न उद्विजेत्**=उद्विग्न न हो; **प्राप्य**=मिलने पर; **च**=भी; **अप्रियम्**=अप्रिय के; **स्थिर-बुद्धिः**=आत्मबुद्धि; **असंमूढः**=मोहरहित; **ब्रह्मवित्**=परतत्त्व का पूर्ण ज्ञानी; **ब्रह्मणि**=ब्रह्मतत्त्व में; **स्थितः**=स्थित है।

अनुवाद

जो न तो प्रिय वस्तु की प्राप्ति से हर्षित होता और न अप्रिय की प्राप्ति होने पर उद्विग्न होता, जो मोहरहित स्थिरबुद्धि पुरुष भगवान् के तत्त्व को जानता है, उसे नित्य ब्रह्मतत्त्व में ही स्थित जानना चाहिए।।२०।।

तात्पर्य

इस श्लोक में आत्मतत्त्व के ज्ञाता महापुरुष के लक्षणों का उल्लेख है। उसका प्रथम लक्षण यह है कि वह मिथ्या देहात्मबुद्धि से मोहित नहीं होता। अपितु, भलीभाँति जानता है कि वह प्राकृत देह नहीं है, वरन् श्रीभगवान् का भिन्न-अंश है। अतः देह सम्बन्धी किसी भी वस्तु की प्राप्ति में उसे हर्ष नहीं होता और न ही किसी वस्तु की हानि में वह शोकाकुल होता। मन की इस समता को स्थिरबुद्धि कहते हैं। अतः स्थूल देह को आत्मा समझने का भ्रम उसे कभी नहीं होता और न ही देह को नित्य मान कर वह आत्मा की उपेक्षा करता है। यही ज्ञान उसे ब्रह्म, परमात्मा तथा श्रीभगवान् नामक परतत्त्व के सम्पूर्ण विज्ञान में स्थित कर देता है। इस प्रकार, श्रीभगवान् से सर्वथा एक हो जाने के लिए मिथ्या प्रयत्न से मुक्त होकर वह अपने स्वरूप को पूर्ण रूप से जान जाता है। यही ब्रह्मानुभूति अथवा स्वरूप-साक्षात्कार है। ऐसी स्थिरमति (चेतना) ही कृष्णभावना कहलाती है।

21/5

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते।।२१।।

बाह्यस्पर्शेषु=बाह्य इन्द्रियसुख में; **असक्तात्मा**=अनासक्त पुरुष; **विन्दति**=आस्वादन करता है; **आत्मनि**=आत्मा में; **यत्**=जो; **सुखम्**=सुख; **सः**=वह;